|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 7: ज्ञानविज्ञानयोग

1/2 (श्लोक 1-14), शनिवार, 18 मई 2024

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/NC-c9vsWMus

शाश्वत ज्ञान और परिवर्तनशील विज्ञान के नियम

परम श्रद्धेय स्वामी श्री गोविन्द देवगिरि जी महाराज की सूक्ष्म उपस्थिति को प्रणाम करते हुए इस पावन गीता सत्र का शुभारम्भ देशभक्ति गीत, हरि शरणम् हरि शरणम् भजन, हनुमान चालीसा एवं श्री कृष्ण दीप प्रज्वलन के साक्षात्कार के साथ हुआ।

श्रीमद्भगवद्गीता के सातवें अध्याय **ज्ञानविज्ञानयोग** के प्रथम श्लोक को आरम्भ करने से पहले हमें छठे अध्याय (**आत्मसंयम योग**) का भी स्मरण होना आवश्यक है क्योंकि आत्मसंयम योग नाम सुनते ही मन में इस योग के मार्ग पर अग्रसर होने का भाव जाग्रत होता है। स्वाभाविक रूप से अर्जुन के मन के सारे सात्विक भावों की झलक श्रीभगवान ने उसकी आँखों में देखी होगी इसी कारण श्रीभगवान ने इस अध्याय को अपने श्री मुख से कहा किन्तु अर्जुन तो दूसरे ही अध्याय में शरणागति को प्राप्त हो गए थे तत्पश्चात आने वाले हर अध्याय को वे बड़े ध्यान से सुन रहे थे और मध्य में प्रश्न भी कर रहे थे। स्वाभाविक रूप से बिना प्रश्न किये यह समझना मुश्किल जान पड़ता है कि सुनने वाला ध्यान से सुन रहा है अथवा नहीं, किसी के ऊपरी हाव भाव को जानकर हम समझ लेते हैं कि आखिर सामने वाले व्यक्ति के मन में क्या चल रहा है? यह सब जानकर भगवान सातवें अध्याय में कहते हैं :-

7.1, 7.2

श्रीभगवानुवाच
मय्यासक्तमनाः(फ्) पार्थ, योगं(म्) युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं(म्) समग्रं(म्) मां(म्), यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु॥1॥
ज्ञानं(न्) तेऽहं(म्) सविज्ञानम्, इदं(म्) वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्, ज्ञातव्यमवशिष्यते॥2॥

श्रीभगवान् बोले - हे पृथानन्दन ! मुझमें आसक्त मनवाला, मेरे आश्रित होकर योग का अभ्यास करता हुआ (तू) मेरे (जिस) समग्र रूप को निःसन्देह जिस प्रकार से जानेगा, उसको (उसी प्रकार से) सुन।
तेरे लिये मैं यह विज्ञान सहित ज्ञान सम्पूर्णता से कहूँगा, जिसको जानने के बाद फिर इस विषय में जानने योग्य अन्य (कुछ भी) शेष नहीं रहेगा।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि हे पृथानन्दन! मुझमें आसक्त मन वाला मेरे आश्रित होकर योग का अभ्यास करता हुआ तू मेरे समग्र रूप को निःसन्देह जैसा जानेगा तू उसको ध्यानपूर्वक सुन, इसके लिए मैं विज्ञान सहित ज्ञान सम्पूर्णता से कहूँगा। जिसको जानने के पश्चात कुछ और जानने की आवश्यकता नहीं रहेगी। श्रीभगवान को यह ज्ञात है कि अर्जुन ने पूर्ण आसक्ति के साथ उन पर आश्रित होकर शरणागति की प्राप्ति कर ली है। इसके सारे प्राण इसके कानों में है, वह सुनना चाहता है कि मैं क्या कह रहा हूँ?

सम्पूर्ण महाभारत में जहाँ-जहाँ भगवान श्रीकृष्ण ने श्लोक को कहा, वहाँ-वहाँ (वासुदेव उवाच) इस नाम से भगवान के द्वारा उद्धृत श्लोकों को लिखा गया।

सम्पूर्ण महाभारत के नवें अध्याय में श्रीमद्भगवद्गीता का प्राकट्य हुआ और अट्ठारह अध्यायों में जब-जब भगवान बोल रहे हैं तब श्रीभगवान उवाच इस नाम से श्लोक लिखे गए हैं। वह परमपिता परमशक्ति श्रीकृष्ण को अपना माध्यम बनाए अपनी वाणी अर्जुन को सुना रहे हैं। कृष्ण जैसे महायोगी अहङ्कार से पूर्णतया मुक्त हुए बिना योगेश्वर कैसे बन सकते हैं? जब भगवान यह कहते हैं कि वे परमशक्ति की आवाज़ हैं, इस तथ्य को जानने के पश्चात और कुछ जानने योग्य शेष नहीं रह जाता। आत्मसंयम योग सुनकर अर्जुन की जो मनोदशा बन चुकी है, यहाँ पर यह बीज डाला गया तो वह भली-भाँत अङ्कुरित होगा और बीज को अङ्कुरित करने के लिए भी मिट्टी का सही होना आवश्यक है कि यह भूमि बीज डालने के लिए उत्तम है या नहीं यह किसान जानता है, ठीक उसी प्रकार अर्जुन की मनोदशा का ज्ञान भगवान को है।

ज्ञान शाश्वत और सनातन है वह अन्तरात्मा की अनुभूति है, जिसे प्रयोगशाला में परीक्षण नहीं किया जा सकता जो ऊपरी सतह पर बातें हैं उनका तो हम प्रयोगशाला में परीक्षण कर सकते हैं परन्तु ज्ञान के लिए बहुत अन्दर तक उतरना पड़ता है ऐसी चीजों का परीक्षण आवश्यक भी है। अभी के लिए ज्ञान और विज्ञान क्या है, यह समझना आवश्यक है।

विज्ञान परिवर्तनशील है बहुत समय पहले विज्ञान द्वारा यह पता चला था कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य उसकी परिक्रमा कर रहा है क्योंकि सूर्योदय होता है तब सूर्य पूर्व की तरफ ऊपर निकलता है और सूर्य अस्त होता है तो पश्चिम की तरफ नीचे उतरता है। भारतीय मनीषियों को यह सब पहले से ज्ञात था किन्तु पश्चिम के विद्वानों को यह देर से पता चला और तब जाकर सारे विज्ञान के नियम बदलने पड़े कि सूर्य स्थिर है और पृथ्वी घूम रही है। वास्तव में देखा जाए तो सूर्य भी स्थिर नहीं है वह अपने महा सूर्य की परिक्रमा कर रहा है लेकिन यह बातें जो कल नहीं पता थी आज पता चलती हैं।

आज से पच्चीस वर्ष पूर्व कोई यह स्वीकार नहीं कर सकता था कि हम चलते-फिरते घूमते मोबाइल पर बात कर लेंगे किन्तु अभी यह आम बात है, ठीक उसी प्रकार वर्षों पूर्व यदि कोई यह कहता कि आदमी आकाश से उड़ेगा तो वह हास्यास्पद होता कि यह क्या कह रहा है?

विज्ञान बदलता रहता है फिर विमान की खोज हुई और अब लोग बहुत ही आसानी से आकाश से यात्रा कर पाते हैं। साथ ही यह बाह्य अनुभूति का विषय है। उसका प्रयोगशाला परीक्षण किया जा सकता है क्योंकि इसका एक आकार है, यह वस्तु रूप है, इसका वजन है, इसे स्पर्श किया जा सकता है, देखा और सुना जा सकता है, गन्ध ली जा सकती है। परन्तु ज्ञान इससे परे है, अपरिवर्तनशील है जो पाँच हजार वर्षों पहले था वही आज भी है।

श्रीमद्भगवद्गीता पाँच हजार वर्षों पहले बताई गई, आज भी उतनी ही यथार्थ है। इसके मध्य में कई पुस्तकें आईं किन्तु वह बनी नहीं रही क्योंकि उनमें ज्ञान की बात नहीं थी, इसलिए भगवद्गीता एक शाश्वत पुस्तक है।

विज्ञान हमारे बुद्धि के स्तर पर होता है और ज्ञान आत्मा के स्तर पर। यह एक बहुत बड़ा अन्तर हम सबको समझना होगा कि बुद्धि की अपनी मर्यादा है लेकिन आत्मशक्ति असीमित है। अपनी बुद्धि के द्वारा हम जिस वस्तु की जाँच पड़ताल करेंगे वह बढ़ती जाएगी किन्तु जन्म के समय वह बुद्धि शून्य है।

जैसे-जैसे हम बड़े होते जाते हैं वैसे-वैसे हमारी बुद्धि का विकास भी होता जाता है परन्तु ज्ञान पूर्व जन्मों से सञ्चित होकर हमारे साथ आगे बढ़ता है। इसीलिए बारह साल की आयु में ज्ञानेश्वर महाराज जैसे सन्त ने ज्ञानेश्वरी लिख दी, उन्होंने भगवद्गीता के

ऊपर हजारों ओवियों की टीका लिखी और उनका यह ज्ञान पूर्व सञ्चित था, योगियों के घर में उनका जन्म हुआ।

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।
एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥ (४२)

ज्ञानेश्वरी काव्यमय है और पहले जन्म की स्मृतियाँ एवं सञ्चित ज्ञान द्वारा ही ज्ञानेश्वर महाराज सरलता से इतना मधुर काव्य लिख पाए।

असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु।।7.1।।

श्रीभगवान ज्ञान के बीज विज्ञान के साथ अर्जुन के मन में रोपित करने वाले हैं। जब तक विज्ञान हावी है पञ्चेन्द्रियों को तीव्र गति से दौड़ाते हुए मन इधर-उधर प्रश्न करता रहता है। जैसे किनारे पर लगते ही नाव का स्थिर होना स्वाभाविक है जब तक बुद्धि स्थिर नहीं होती मन विचलित रहता है। जब तक हम अपने कानों से सुन न लें, अपनी आँखों से देख न लें तब तक संशय रहता है। ज्ञान के प्राकट्य मात्र से ही शब्द मौन हो जाते हैं, जिस क्षण आँखें बन्द हो जाए उसी क्षण अन्दर उतरना आरम्भ हो जाएगा, बहिर्मुखता से अन्तर्मुखता की ओर जब हम बढ़ते हैं तभी ज्ञान आत्मा की अनुभूति कर सकते हैं, आत्मा विराट है, असीम है, अनन्त है, अपरिमित है, सनातन है।

बुद्धि के स्तर पर मनुष्य ऊपर उठता है और बुद्ध के स्तर पर पहुँचता है, कई लोग बुद्ध बन चुके हैं। हमें केवल एक ही भगवान गौतम बुद्ध का पता है। बुद्धों की हमारे यहाँ श्रृङ्खला है तो हम वहाँ तक क्यों नहीं पहुँच सकते। ज्ञान मानने से तथा विज्ञान जानने से प्राप्त हो सकता है।

योगं युञ्जन्मदाश्रयः।

अर्थात् योग के मार्ग पर योग का अभ्यास करते हुए समग्र रूप से नि:संदेह होकर ज्ञान को जाना जा सकता है। भगवान की कही बातें कानों में प्राण लाकर जब हम सुनेंगे तभी वह हमारे अंत:करण में प्रवेश करेंगी।

7.3

मनुष्याणां(म्) सहस्रेषु, कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां(ङ्), कश्चिन्मां(म्) वेत्ति तत्त्वतः॥3॥

हजारों मनुष्यों में कोई (एक) सिद्धि (कल्याण) के लिये यत्न करता है (और) (उन) यत्न करने वाले सिद्धों (मुक्त पुरुषों) में कोई (एक) ही मुझे यथार्थ रूप से जानता है।

विवेचन:- हम सभी भाग्यशाली हैं कि हमारे भीतर ज्ञान और विज्ञान को जानने की जिज्ञासा जागृत हुई, गीता जी को सीखने हेतु आगे की ओर अग्रसर हुए यह सामान्य घटना नहीं है अपितु जन्म-जन्मान्तर का पुण्य प्रवाह यहाँ तक बढ़ता चला आया और इस प्रकार से हम भगवद्गीता को समझते हैं, बड़े ही उत्साह के साथ हम सुनते हैं कि एक सौ नब्बे देशों के नौ लाख लोग गीता पठन कर रहे हैं, एक करोड़ चालीस लाख तो भारतीय हैं तो इसमें से नौ लाख छोटी संख्या है, हजारों में से एक को जिज्ञासा होती है अर्थात् उन नौ-दस लाख में से एक जिज्ञासु होता है यह इतना सरल नहीं कि मुझे समझ में आ जाए और मैं इस मार्ग पर चल पड़ूँ। हम अपने आसपास के व्यक्तियों को गीता सीखने के लिए जागृत करते हैं किन्तु वह मानते ही नहीं ऐसा क्यों है? इसके लिए एक उदाहरण है क्या हमने कभी सुना है कि एक मछली समुद्र को खोजने के लिए निकल पड़ी मछली का जन्म ही समन्दर में हुआ है वहीं विकसित हुई। अतः यह स्वाभाविक ही है कि जहाँ विपुल मात्रा में जल उपलब्ध था उस जल की खोज करने की आवश्यकता मछली को प्रतीत ही नहीं होती, जहाँ प्रभाव है वहाँ लोग उसे खोजते नहीं, जिस बात का अभाव है सिर्फ उसे ही खोजने लोग निकलते हैं जैसे जीवन में पैसे का अभाव है तो पैसे की खोज में निकलते हैं।

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।

भगवान सर्वत्र हैं हम सागर की मछली की भाँति हैं कि वहीं पले बढ़े हैं तो उसको क्या ढूँढ़ना? परमात्मा को ढूँढ़ने वाले कोई एक बिरले ही होते हैं इस प्रकार सीमित जगह पर रहने वाली मछली प्रवास के लिए निकल पड़ती है, समुद्र के एक छोर से दूसरे छोर की ओर ।

सेना में लाखों लोग होते हैं परन्तु उसमें एक सेनापति ऐसा होता है जो नरोत्तम के आसन पर वीरश्री प्राप्त करके सिंहासनाधिष्ठत होता है। वह एक छत्रपति शिवाजी महाराज जैसा होता है। जो हमें सहज रूप से मिल जाता है। उसकी कीमत हमें पता नहीं चलती।

एक भिखारी महीनों से भूखा-प्यासा था तभी एक व्यक्ति उसके सामने आया तो उसने गुहार लगाई कि कुछ खाने को दे दो और मुझे बचा लो उसने उस भिखारी को उठाया और राजा के दरबार में ले गया और महाराज से कहा कि एक ऐसा आदमी है जो रोटी के बदले कुछ भी देने को तैयार है, आप उसे भोजन दें दे आप जो माँगेंगे यह सब देने को सहमत है राजा ने कहा मैं रोटी तो दूँगा, साथ में एक लाख रुपए भी दूँगा। यह मुझे अपनी दोनों आँखें दे दे। मैं उसे दो लाख रुपए देने को सहमत हूँ। भिखारी घबरा कर बोला आप मेरी आँखें माँग रहे हैं जब तक उसकी आँखें थीं उनकी कीमत नहीं पता थी वह देने को सहमत था। आँखें ही नहीं रहेंगी यह सोच वह घबरा गया कि नहीं भोजन मिलेगातो चलेगा किन्तु आँखें नहीं बेचूँगा।

उस आदमी ने भिखारी से कहा कि तुम कोई और अङ्ग भी दे सकते हो महाराज तुम्हें करोड़पति बना देंगें, परन्तु वह नहीं माना उसे सच का ज्ञान प्राप्त हुआ।

यही घटना हम सभी के साथ घटती है कि भगवान तो आसानी से उपलब्ध है बुढ़ापे में देखा जाएगा, अभी क्या जल्दी है।

मनुष्याणां(म्) सहस्रेषु, कश्चिद्यतति सिद्धये।

मनुष्य हजारों में एक सिद्ध होने के लिए तत्पर बनता है और मुझे तत्व से जानता है।
श्रीभगवान ने विज्ञान को प्रकृति पर आश्रित परिवर्तनशील बताया है।

7.4

भूमिरापोऽनलो वायुः(ख्), खं(म्) मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं(म्) मे, भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥4॥

पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश - (ये पंच महाभूत) और मन, बुद्धि तथा अहंकार - इस प्रकार यह आठ प्रकार के भेदों वाली मेरी अपरा प्रकृति है। हे महाबाहो ! इस अपरा प्रकृति से भिन्न जीवरूप बनी हुई मेरी परा प्रकृति को जान, जिसके द्वारा यह जगत धारण किया जाता है। (7.4-7.5)

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि पञ्च महाभूतों से यह स्थूल शरीर बना है पृथ्वी, जल, तेज, वायु औऱ आकाश और मन, बुद्धि तथा अहङ्कार से हमारा सूक्ष्म शरीर बना है। इसमें मन को पहले और अहङ्कार को अन्त में क्यों कहा गया है? ऐसा विचार मन में आता है कि भूमि को पहले और आकाश को बिल्कुल अन्त में क्यों कहा गया? यह एक अद्भुत क्रम है, भूमि सबसे ज्यादा जड़ है और आकाश सबसे ज्यादा तरल है, सबसे जड़ चीज जानने योग्य सहज होती है। जैसे पृथ्वी कहते ही हम शीघ्रता से समझ जाते हैं कि जहाँ हम खड़े हैं वह पृथ्वी है परन्तु आकाश को समझना इतना सरल नहीं है इसी प्रकार मन अति तीव्र गति वाला, विशाल है और इसे हम जितना चाहे उतना सूक्ष्म भी कर सकते हैं। अहङ्कार सूक्ष्मातिसूक्ष्म है यह बिना ज्ञात हुए शरीर में कहीं से भी प्रवेश कर जाता है और क्षूद्राति क्षूद्र सारी गड़बड़ इस अहङ्कार के कारण ही घट रही है। सर्वनाश का कारण ही अहङ्कार है।

सोलहवें अध्याय में आरम्भ के तीन श्लोकों में छब्बीस गुण सम्पदा भगवान ने बताई है:-

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ (१)
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥ (२)
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहोनातिमानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ (३)

दैवीय गुणों की सेना में अभय को सेनापति बनाकर सबसे आगे खड़ा किया गया और अहङ्कार के विरुद्ध शब्द है-नातिमानिता उसे सबसे अन्त में रखा गया क्योंकि अहङ्कार पीछे से आने के कारण सारी सेना को नष्ट भ्रष्ट कर देगा तो उसका सामना करने के लिए सबसे पीछे नातिमानिता को खड़ा किया गया।

हमारी प्राण-शक्ति अग्नि तत्व ऑक्सीजन पर टिका है, जिस प्रकार हम दिया जलाते हैं और हवा चलने से दिया बुझने के डर से हम उस ज्योति को हाथ से बचाने का प्रयास करते हैं तो वह संभली रहती है यदि किसी ने उस दीपक की लौ पर ग्लास को उल्टा रख दिया तो क्या होगा। जब तक उसमें ऑक्सीजन है दिया जलता रहेगा जैसे ही ग्लास के अन्दर की ऑक्सीजन समाप्त हो जाए तो वैसे ही दीपक बुझ जाएगा।

हमारे प्राण, अपान जो निरन्तर चल रहा है उसके ऊपर जो प्राण ज्योति है वह टिकी हुई है, इसीलिए परमात्मा को जानने से पहले हमें प्रकृति को भी जानना अति आवश्यक है।

मीराबाई कहती हैं :-
पायोजी मैंने राम रतन धन पायो।
मराठी में एक सुन्दर गीत है-
नाहि खर्चिली कवडीदमडी, नाहि वेचला दाम
विकत घेतला श्याम, बाई मी विकत घेतला श्याम !

न दाम दिया न एक कौड़ी या पैसा दिया और मैंने खरीद लिया क्योंकि यह पैसे से खरीदा नहीं जा सकता।

अपरा प्रकृति भगवान ने बताई है परा प्रकृति को जानने के लिए जो अपरा प्रकृति से भिन्न है उसको जानने के लिए आगे श्रीभगवान बताते हैं:-

7.5

अपरेयमितस्त्वन्यां(म्), प्रकृतिं(म्) विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां(म्) महाबाहो, ययेदं(न्) धार्यते जगत्॥5॥

विवेचन:- हे महाबाहो! इस अपरा प्रकृति से भिन्न जीवरूपी बनी हुई मेरी परा प्रकति को जान, जिसके द्वारा यह जगत धारण किया गया है इस प्रकृति की रचना भी भगवान ने ही की वह वहाँ ठहरे नहीं इसलिए वे परा हैं अर्थात् उससे परे हैं, पेड़ की जड़ें दिखती नहीं वह नीचे जमीन में अदृश्य होती हैं। इस कारण से पेड़ पर फूल व पत्ती लगते हैं जितनी भी डाली काट ली जाए निरन्तर पेड़ फिर उग आता है। अगर उसकी जड़ें ही काट दी जाए तो वह पेड़ उसी क्षण गिर जाता है। पराशक्ति पर ही सारी अपराशक्ति निर्भर है। जड़ के ऊपर वृक्ष निर्भर है। उसी प्रकार जो भगवत् तत्व है वह परा शक्ति है और वह दिखती नहीं है। इस अदृश्य पराशक्ति पर ही सम्पूर्ण प्रकृति दृश्यमान हो रही है।

7.6

एतद्योनीनि भूतानि, सर्वाणीत्युपधारय।
अहं(ङ्) कृत्स्नस्य जगतः(फ्), प्रभवः(फ्) प्रलयस्तथा॥6॥

सम्पूर्ण प्राणियों के (उत्पन्न होने में) अपरा और परा - इन दोनों प्रकृतियों का संयोग ही कारण है - ऐसा तुम समझो। मैं सम्पूर्ण जगत का प्रभव तथा प्रलय हूँ।

विवेचन:- एक मात्र भारतीय दर्शन यह बात कहता है कि जो हमारा जन्मदाता है वही हमारा मृत्यु दाता भी है वही भगवान है, अन्य सारे देशों एवं धर्मों में जो दर्शन खड़ा किया गया उसमें जन्मदाता भगवान है और मृत्यु दाता शैतान है। यह एक वर्तुल है कि जन्म हुआ है तो मृत्यु भी निश्चित है। भगवान ने दूसरे अध्याय में बहुत विस्तार से बताया है:-

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च |
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि || २७ ||

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥23॥

जहाँ से आरम्भ हुआ यह वर्तुल पूर्ण होकर वहीं पर अन्त हुआ। फिर नया वर्तुल आरम्भ हुआ वर्तुल यानी शून्य। एक शून्य पूर्ण होने पर पर दूसरा शून्य आरम्भ हो जाता है। एक पूर्ण पूर्ण हुआ कि तभी दूसरा पूर्ण आरम्भ हो जाता है।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

हमारे दर्शनशास्त्र में यह अद्भुत श्लोक है कि एक पूर्ण से ही दूसरे पूर्ण का आरम्भ हो जाता है और एक आरम्भ से ही दूसरे अन्त का भी आरम्भ हो जाता है। मृत्यु को भी हम नए सृजन में होने वाली घटना बोलते हैं। यह वस्त्र बदलने जैसा है इसलिए मृत्यु को भी हमने बड़ी सार्थकता के साथ लिया है। हमारे यहाँ जब परिपक्व मृत्यु होती है पोते ,पड़पोते हो गए सारी दुनिया देख ली तो मृत्यु के पश्चात गाजे बाजे के साथ अन्तिम यात्रा निकालने का विधान बताया गया है कि नया वस्त्र धारण करने तृप्तात्मा निकल पड़ी है, मृत्यु के भय से जीवन जीना नीरसता का भाव है। जिसे अमृत्व का ज्ञान है कि आत्मा अमर है और मृत्यु अन्त नहीं है।

छत्रपति सम्भाजी महाराज सीना ताने मृत्यु के सामने चले गए, गुरु गोविन्द सिंह के छः से आठ साल के दो छोटे बच्चे फतेह सिंह और जोरावर सिंह जिनके चारों तरफ दीवारें खड़ी की गई और दीवारों के बीच में उन्हें चुन दिया गया। अपनी मृत्यु का भय नहीं लगा। उन्हें यह ज्ञात था कि मृत्यु अन्त नहीं अपितु प्रारम्भ है।

7.7

मत्तः(फ्) परतरं(न्) नान्यत्, किञ्चिदस्ति धनञ्जय।
मयि सर्वमिदं(म्) प्रोतं(म्), सूत्रे मणिगणा इव॥7॥

इसलिये हे धनञ्जय ! मेरे सिवाय (इस जगत का) दूसरा कोई किंचिन्मात्र भी (कारण तथा कार्य) नहीं है। (जैसे सूत की) मणियाँ सूत के धागे में (पिरोयी हुई होती हैं), ऐसे ही यह सम्पूर्ण जगत मेरे में (ही) ओत-प्रोत है।

विवेचन:- हमने ज्ञान नित्य (एक) और विज्ञान अनित्य (अनेक) है का अध्ययन किया, ज्ञान सनातन है और विज्ञान तात्कालिक है, भविष्य नहीं। प्रकृति बाहर से माला के मणि के समान दिखती है और उसको एकसूत्र में बाँध कर रखने वाला अन्दर का जो एक धागा है वह दिखाई नहीं पड़ता किन्तु इस धागे के कारण ही माला के मनके टिके हुए हैं, बिना सूत्र के मनको की माला

सम्भव नहीं वह खण्ड-विखण्ड हो जाएगी। इसी प्रकार परमात्मा के अस्तित्व के बिना यह चराचर सृष्टि सम्भव नहीं, हमारा यह पञ्च भूतों का शरीर टिका हुआ है क्योंकि वह पुरुष तत्व अन्दर बना हुआ है, जैसे ही वह पुरुष तत्व आत्मा अगले प्रवास के लिए जाएगा पञ्च तत्व से बना यह शरीर मिट्टी में मिल जाएगा।

जब मृग जल दूर दिखता है तो कस्तूरी मृग उसको ढूँढने के लिए निकल पड़ता है कि वहाँ जल मिलेगा क्योंकि वहाँ जल का प्रवाह दिखता है पर वास्तविकता में वहाँ सूर्य बिम्ब होता है जल नहीं। इस प्रकार समस्त सृष्टि को अपने आप में स्वतन्त्र दिखाई देने पर भी वह केवल परमात्मा का आविष्कार है, यह समझना बड़ा आवश्यक है। श्रीभगवान कहते हैं कि यह सारा जगत मुझसे ओत-प्रोत है।

7.8

रसोऽहमप्सु कौन्तेय, प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः(स्) सर्ववेदेषु, शब्दः(ख्) खे पौरुषं(न्) नृषु॥8॥

हे कुन्तीनन्दन! जलों में रस मैं हूँ, चन्द्रमा और सूर्य में प्रभा (प्रकाश) मैं हूँ, सम्पूर्ण वेदों में प्रणव (ओंकार), आकाश में शब्द (और) मनुष्यों में पुरुषार्थ (मैं हूँ)।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि पानी में मैं रस हूँ, इससे जो क्षुधा मिटाई जाती है, उस रस को क्या हम खोज पाएँगे? इस पूरी सृष्टि में भगवान का अस्तित्व उस रस जैसा है। जैसे पानी में रस है, सूर्य चन्द्र और तारों के अन्दर मैं प्रभा एवं प्रकाश हूँ। प्रकाश नहीं दिखता। प्रकाश के कारण ही हम चीजों को देख पाते हैं। प्रकाश पड़ने पर जो किरणें दिखाई देती हैं वह उसके धूलि कण होते हैं।

भगवान ने बहुत ही अद्‌भुत वचन कहे हैं कि सारे वेदों में मैं ओंकार हूँ, प्रणव केवल ध्वनि मात्र है शब्द नहीं, सारे मन्त्रों का बीज मन्त्र ओंकार ही है। इसी प्रकार उस पुरुष अधिष्ठान के कारण ही यह सारी सृष्टि टिकी हुई है। इसके बिना सृष्टि सम्भव नहीं। वह स्वयं अप्रकट है किन्तु दूसरों को प्रकट करने के लिए उसे पुरुष की आवश्यकता है, जो अदृश्य है।

आकाश हमें दिखाई पड़ता है और उसमें अनेकानेक शब्दों का भण्डार है। जिस स्थान से जैसे जूम मीटिंग हो रही है तो उनके शब्द उस उपकरण में डाले गए। उसे आवृत्ति में लगाए गए। वहाँ से हमने उस आवृत्ति का मिलान किया और हम उन शब्दों को सुन रहे हैं। आज के वैज्ञानिक कहते हैं कि तीन सौ वर्ष घटना या पाँच हजार वर्ष पूर्व कही गई श्रीमद्भगवद्गीता भी हम श्रीकृष्ण के शब्दों में सुन पाएँगे अगर आवृत्ति मिल गई।

भगवान कहते हैं मनुष्य में मैं पुरुषार्थ हूँ, शरीर के नौ द्वारों की नगरी में रहने वाला वह परमात्मा पुरुष मैं हूँ।

पुरुषार्थ को बाहर निकाल कर देखा नापा नहीं जा सकता ईश्वर शाश्वत है।

7.9

पुण्यो गन्धः(फ्) पृथिव्यां(ञ्) च, तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं(म्) सर्वभूतेषु, तपश्चास्मि तपस्विषु॥9॥

पृथ्वी में पवित्र गन्ध (मैं हूँ), और अग्नि में तेज मैं हूँ तथा सम्पूर्ण प्राणियों में जीवनी शक्ति (मैं हूँ) और तपस्वियों में तपस्या मैं हूँ।

विवेचन:- प्रथम वर्षा होने पर तप्त धरती से जो सुगंध निकलती है वह पवित्र गंध है, शरीर भी पृथ्वी से ही बना है। कहीं ऐसे महात्मा हुए हैं जो चलते थे तो पवित्र सुगन्ध आती थी जिससे पहचाना जाता था कि यही महात्मा यहाँ से गए हैं। श्रीभगवान कहते हैं कि अग्नि के अन्दर का तेज भी मैं हूँ अग्नि देखी जा सकती है पर उसका तेज नहीं।

प्राणी देखे जा सकते हैं किन्तु उनके जीवन की जो शक्ति है वह अदृश्य है, तपस्वी देखे जा सकते हैं किन्तु उनकी तपस्या का माप नहीं लिया जा सकता।

7.10

बीजं(म्) मां(म्) सर्वभूतानां(म्), विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि, तेजस्तेजस्विनामहम्॥10॥

हे पृथानन्दन ! सम्पूर्ण प्राणियों का अनादि बीज मुझे जान। बुद्धिमानों में बुद्धि (और) तेजस्वियों में तेज मैं हूँ।

विवेचन:- श्रीभगवान हम सामान्य व्यक्तियों के लिए इशारा करते हुए समझाते हैं कि सभी प्राणियों का बीज तू मुझे समझ, वृक्ष का विस्तार एक बीज से ही होता है। जब वृक्ष बड़ा हो जाता है तब हम बीज को खोज नहीं सकते लेकिन वह बीज पूरे वृक्ष में समाहित है, कुछ निर्बुद्ध को भी हम बुद्धिमान समझ बैठते हैं फिर भी वे कुछ ज्ञान की बातों का भण्डार लिए चलते हैं मात्र इस बात से उन्हें बुद्धिमान नहीं समझना चाहिए।

Knowledge और wisdom दोनों अलग बात है। तेज वह होता है कि किसी तेजस्वी का शरीर दिखना बन्द हो जाए और केवल उनका तेज पुञ्ज ही दिखे, भगवान कहते हैं उस आन्तरिक ऊर्जा का तेज मैं हूँ।

7.11

बलं(म्) बलवतां(ञ्) चाहं(ङ्), कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धो भूतेषु, कामोऽस्मि भरतर्षभ॥11॥

हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! बलवालों में काम और राग से रहित बल मैं हूँ और प्राणियों में धर्म से अविरुद्ध (धर्मयुक्त) काम मैं हूँ।

विवेचन:- श्रीभगवान अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन! बलशालियों में राग से रहित बल मैं हूँ। स्वाभाविक रूप से बलशाली अहङ्कारी होते हैं जो अपने बल का प्रयोग किसी को मोहित करने के लिए या अपनी कामनाओं की पूर्ति करने के लिए करते हैं लेकिन वह बिरला बलवान है जिसकी बलोपासना स्वार्थ के लिए नहीं उसके परे है। धर्म युक्त काम मैं हूँ। यह बहुत बढ़िया अद्भुत बात है क्योंकि कामवासना अधिकतर मूर्छावस्था है, कामवासना जब तीव्र होती है तब व्यक्ति मूर्छित अवस्था में चला जाता है और अपने विवेक को खो देता है।

लेकिन धर्म के द्वारा बताए गए पितृ ऋण से मुक्ति के लिए सन्तान प्राप्ति के पवित्र हेतु से किया गया कार्य धर्म से अवरुद्ध अर्थात् युक्त है।

7.12

ये चैव सात्त्विका भावा, राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि, न त्वहं(न्) तेषु ते मयि॥12॥

और तो क्या कहूँ - जितने भी सात्त्विक भाव हैं (और) जितने भी राजस तथा तामस (भाव हैं, वे सब) मुझ से ही होते हैं - ऐसा उनको समझो। परन्तु मैं उनमें (और) वे मुझमें नहीं हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि जो नष्ट नहीं होने वाला, अदृश्य है, अनन्त है, असीम है, अपरिमित है, सनातन है यह सारे ही मेरे अन्यान्य रूप हैं। वह सब मुझमें हैं लेकिन मैं उनमें नहीं हूँ। जैसे गाड़ी बनाने वाली कम्पनी टाटा गाड़ी बेच देती है और जब दुर्घटना होती है तो कम्पनी का नाम नहीं आता, गाड़ी चालक की गलती होती है कम्पनी उसमें लिप्त नहीं होती।

प्रकृति परमात्मा से है किन्तु परमात्मा उसमें लिप्त नहीं, जो प्रकृति में रमकर उसके रस का सेवन करेगा उसे परमात्मा की प्राप्ति यह अशक्य प्राय: है परन्तु जो परमात्मा में रस लगाएगा उसे प्रकृति के सारे लाभ प्राप्त हो सकते हैं।

सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण यह तीनों गुण प्रकृति द्वारा निर्मित उस का रूप हैं:-

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।

मैं उसका अध्यक्ष हूँ कर्ताधर्ता हूँ, तीनों गुण मेरे द्वारा निर्मित हैं। जिस प्रकार स्वामी गोविन्ददेव गिरि जी महाराज गीता परिवार के अध्यक्ष हैं और उनके निर्देशों का पालन हम सभी गीता सेवी करते हैं। जिनकी सङ्ख्या अनुमानित आठ से नौ हजार हैं। वह पूर्णतया इसमें लिप्त नहीं है क्योंकि इतने सारे कार्यों में व्यस्त हैं कि किसी कार्यक्रम में उनका सम्बोधन ही गीता परिवार के लिए, हम सभी के लिए आशीर्वाद स्वरुप होता है जिसके फलस्वरुप हम सभी धन्य हैं। स्वामी जी के नाम से ही गीता परिवार जाना जाता है।

श्रीभगवान कहते हैं केवल सत्व गुणी होना ही पर्याप्त नहीं है इसके लिए गुणातीत होना होगा, जिस प्रकार बीज से वृक्ष की शाखा बनती है पर शाखा में बीज नहीं होता। बादल आकाश में होते हैं लेकिन आकाश बादल में नहीं होता, धुआँ अग्नि से निकलता है लेकिन धुएँ में अग्नि नहीं होती, इसी प्रकार यह सारे तीनों गुण भगवान से बने हैं परन्तु भगवान उसमें नहीं है।

7.13

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैः(र्), एभिः(स्) सर्वमिदं(ञ्) जगत्।
मोहितं(न्) नाभिजानाति, मामेभ्यः(फ्) परमव्ययम्॥13॥

किन्तु - इन तीनों गुण रूप भावों से मोहित यह सम्पूर्ण जगत (प्राणिमात्र) इन गुणों से अतीत अविनाशी मुझे नहीं जानता।

विवेचन:- इन तीनों गुण रूपी भावों से मोहित यह सम्पूर्ण जगत इन गुणों से अतीत एवं अविनाशी मुझे नहीं जानता। जिस प्रकार काई होती है वह पानी से ही तैयार होती है। पानी के ऊपर एक आच्छादन आता है और पानी देखना कठिन हो जाता है। आकाश में बादल छाने पर आकाश बादलों से लिप्त हो जाता है तब आकाश ही दिखाई नहीं पड़ता क्योंकि बादलों ने आकाश को ही ढ़क दिया। इस प्रकार कभी-कभी ऐसी भाव विभोर, अप्रिय या हास्यप्रद घटना घटित होती है तो आँखों में पानी भर आता है, पानी को आँखों ने बनाया किन्तु उसी पानी द्वारा बाहर का दृश्य धुंधला प्रतीत होता है।

यह सारे गुण और प्रकृति भगवान द्वारा बनाई हुई है लेकिन जब व्यक्ति इन सब में लिप्त होता है तो एक आच्छादन आ जाता है। इन तीन गुणों का आच्छादन भगवान को हमारी आँखों से ओझल कर देता है जिससे वे अदृश्य हो जाते हैं।

जैसे कच्चा घड़ा मिट्टी में मिल सकता है पर जब उसे एक बार अग्नि में तपाया जाता है तो वह अग्नि से अलग हो जाता है। यह तपाने की क्रिया अर्थात् साधना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। स्वयं के द्वारा किये गये तप एवं साधना से उस अविनाशी रूप के ज्ञान की प्राप्ति हमें हो सकती है। सारी मोह माया परमपिता परमात्मा द्वारा निर्मित है उसी के द्वारा ऐसा आवरण तैयार होता है कि मनुष्य विषयान्ध होकर उस परमात्मा को विस्मृत कर देता है।

7.14

दैवी ह्येषा गुणमयी, मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते, मायामेतां(न्) तरन्ति ते॥14॥

क्योंकि मेरी यह गुणमयी दैवी माया दुरत्यय है अर्थात् इससे पार पाना बड़ा कठिन है। जो केवल मेरे ही शरण होते हैं, वे इस माया को तर जाते हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि कि मेरी गुणमयी दैवीय माया अत्यन्त दुरत्य है इससे पार जाना सरल कार्य नहीं है। जो मेरे शरणागति आते हैं वे इन सब से तर जाते हैं। त्रिगुणों के मेघ बरसने से बाढ़ आती है उसमें सभी यम और नियम बह जाते हैं।

मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का प्रयास करता रहता है हाल ही में दुबई में महा भयङ्कर बाढ़ आई इसका कारण प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के लिए बादलों पर कुछ रसायन के छिड़काव किए गए थे जिसके कारण बादल इस तरह से फटे कि पूरी दुबई महानगरी भयङ्कर बाढ़ से अस्त-व्यस्त हो गयी। प्रकृति पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा कभी नहीं करनी चाहिए प्रायः नुकसान ही होता है, इसमें सफलता प्राप्त नहीं होती। हमें बाहय वर्तुल में जाकर भगवान के आश्रित हो जाना चाहिए, भगवान का आश्रय ग्रहण करते ही प्रकृति हमारे अधीन हो जाती है क्योंकि प्रकृति भगवान के अधीन है।

श्री ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं:-
यह माया की महानदी कैसी है,उसे पार कैसे किया जा सकता है?

ब्रह्म जल के ऊँचे पहाड़ से सङ्कल्प का जल प्रवाहित हो और पञ्चमहाभूतों के बुलबुले उसमें निकल पड़ें ऐसी यह माया नदी है।

सृष्टि के विस्तार से एवं काल गति के वेग से, प्रचण्ड आवेग से यह नदी कल-कल करती आगे बढ़ती है, त्रिगुणों के मेघ उस पर बरसते हैं, माया-मोह की बाढ़ आती है उस पर और सारे यम, नियमों के नगर ध्वस्त हो जाते हैं हम कई बार चेष्टा करते हैं कुछ यम में बाँध लो स्वयं को कुछ नियम कर लो स्वयं के लिए लेकिन जैसे ही यह त्रिगुणात्मक प्रकृति काम करने लगती है सारे यह नियम बह जाते हैं। यम, नियमों के महाद्वार गिर पड़ते हैं द्वेष के आवर्तन और मत्सर्ग के मोड़ से, बड़े ऊफान से बहती इस माया नदी में प्रमाद की प्रचण्ड मछलियाँ तैरती रहती हैं, पैदा होती रहती है। विषय सुखों के द्वीप पर, कामनाओं की लहरें टकराती हैं और जीव सङ्ग का झाग जगमगाने लगता है, चमचमाने लगता है परन्तु वहाँ बुलबुले प्रकट होते और नष्ट होते रहते हैं।

अहङ्कार के प्रवाह से इस माया की नदी में और भी बाढ़ आती जाती है और इससे और भी अधिक विषयों की लहरें उठने लगती हैं, उदय अस्त की शिलाएँ जब उसमें गिरने लगती हैं तब जन्म और मरण के पत्थर बिखरने लगते हैं। वहाँ पर पञ्च भौतिक बुलबुले बनते बिगड़ते रहते हैं, जीवन सृष्टि आती जाती रहती है। मोह और भ्रम की मछलियाँ धैर्य को खा जाती हैं और अज्ञान के भौरे जहाँ नित्य दिखते हैं ऐसे इस महानदी से, माया की नदी से कैसे बचा जाएगा?

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि स्वयं की बुद्धि के अहङ्कार से इसे मैं पार करूँगा। ऐसा अहङ्कार यदि किसी व्यक्ति में हो तो वह बीच मझधार में निश्चित फँसेगा। ज्ञान के गर्व पर यदि तरना चाहोगे तो रसातल पर पहुँचे बिना नहीं रहोगे। वेदों की ऋचाएँ बोलते हुए निकलोगे तो मदमीन महा मछली द्वारा निगले जाओगे। जवानी के जोश में जो निकलेंगे उन्हें विषयों के मगरमच्छ चबा जाएँगे, बुढ़ापे में अनुभव के आधार पर निकलोगे तो मतिभृंश के जाल में फँस जाओगे।

जहाँ वैराग्य की नाव, जहाँ विवेक की रस्सी हो तो ही बचना सम्भव है, जहाँ सद्गुरु केवट बन जाए, जहाँ इन्द्रियों का निग्रह, स्वयं नियन्त्रण की नाव हो, योग मार्ग का अनुसरण हो, परमात्मा की प्रीत की प्यास हो, श्रद्धा भाव से समर्पण हो, सात्विक कर्मों का अनुसरण हो और पूर्ण शरणागति का भाव हो, समत्व से चित्त ओत - प्रोत हो तब वहाँ इस मझधर को पार होकर माया नदी से तरा जा सकता है।

प्रश्नोत्तर सत्र

प्रश्नकर्ता:- चाँदनी दीदी
प्रश्न:- ॐकार का उच्चारण स्त्रियों को नहीं करना चाहिए। ऐसा कुछ है क्या?
उत्तर:- ॐकार का उच्चारण नहीं करना चाहिए ऐसी बात नहीं है, ॐकार का उच्चारण जिस अवस्था के साथ करना चाहिए इस बात का ध्यान रहे और ॐकार का उच्चारण करें। बहुत कमजोर जो मन: स्थिति वाली महिलाएँ होती हैं, पहले ही महिलाओं की मन: स्थिति बहुत तरल होती है बहुत भावना प्रधान और भावनाशील होती हैं और इसलिए कुछ मन्त्रों का प्रभाव उनके भावनाशील मन पर अधिकाधिक तीव्र गति से होता है और इसलिए कुछ प्रकार के देवता हैं जैसे शनिदेव और भी ऐसे कठोर

देवता हैं उनका भी पूजन महिलाओं के लिए वर्जित कहा गया है, कारण यह है कि महिलाएँ बड़ी भावनाप्रधान हैं, उनके मन पर बहुत जल्दी बहुत गहरा असर होता है इसलिए कुछ मन्त्रों का उच्चारण महिलाएँ नहीं करें यह बात कही गई है, अब तो महिलाएँ भी धीरे-धीरे इतनी आगे बढ़ रही हैं कि वे शक्तिशाली बनती जा रही हैं धीरे-धीरे उनका मन भी प्रबल होता जा रहा है ऐसे में ॐ ध्वनि का लाभ उनको अवश्य लेना चाहिए जिससे उनका और भी विकास होना सम्भव हो।

प्रश्नकर्ता:- कमलेश दीदी
प्रश्न:- शास्त्र विधि से किए गए यज्ञ और उपवास तथा अशास्त्र विधि से किए गए यज्ञ और उपवास में क्या अन्तर है?
उत्तर:- शास्त्र विधि से किए गए यज्ञ और उपवास में मंत्रोच्चार सुस्पष्ट होता है। वैदिक शिक्षा प्राप्त पुरोहित से यज्ञ करवाना और दान दक्षिणा भी होनी चाहिए। उपवास भी दिखावे के लिए नहीं होना चाहिए। जब मूल बात को समझ कर उपवास किया जाए तो वह शास्त्र विधि सम्मत होता है।

प्रश्नकर्ता:- रोहिणी दीदी
प्रश्न:- हमारे लिए श्रीमद्भगवद्गीता किसने लिखी?
उत्तर:- व्यासेन ग्रथितां पुराणमुनिना मध्ये महाभारतं॥
महर्षि वेदव्यास जी ने दिव्य दृष्टि से देखकर भगवद्गीता की रचना की।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let’s come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/